ॐ श्रीपरमात्मने नमः

205

नवदुर्गा

गीताप्रेस, गोरखपुर

१-शैलपुत्री

वन्दे वाञ्छितलाभाय चन्द्रार्धकृतशेखराम्।
वृषारूढां शूलधरां शैलपुत्रीं यशस्विनीम्॥

माँ दुर्गा अपने पहले स्वरूपमें 'शैलपुत्री'के नामसे जानी जाती हैं। पर्वतराज हिमालयके वहाँ पुत्रीके रूपमें उत्पन्न होनेके कारण इनका यह 'शैलपुत्री' नाम पड़ा था। वृषभ-स्थिता इन माताजीके दाहिने हाथमें त्रिशूल और बायें हाथमें कमल-पुष्प सुशोभित है। यही नव दुर्गाओंमें प्रथम दुर्गा हैं।

अपने पूर्वजन्ममें ये प्रजापति दक्षकी कन्याके रूपमें उत्पन्न हुई थीं। तब इनका नाम 'सती' था। इनका विवाह भगवान् शङ्करजीसे हुआ था। एक बार प्रजापति दक्षने एक बहुत बड़ा यज्ञ किया। इसमें उन्होंने सारे देवताओंको अपना-अपना यज्ञ-भाग प्राप्त करनेके लिये निमन्त्रित किया। किन्तु शङ्करजीको उन्होंने इस यज्ञमें निमन्त्रित नहीं किया। सतीने जब सुना कि हमारे पिता एक अत्यन्त विशाल यज्ञका अनुष्ठान कर रहे हैं, तब वहाँ जानेके लिये उनका मन विकल हो उठा। अपनी यह इच्छा उन्होंने शङ्करजीको बतायी। सारी बातोंपर विचार करनेके बाद उन्होंने कहा—''प्रजापति दक्ष किसी कारणवश हमसे रुष्ट हैं। अपने यज्ञमें उन्होंने सारे देवताओंको निमन्त्रित किया है। उनके यज्ञ-भाग भी उन्हें समर्पित किये हैं, किन्तु हमें जान-बूझकर नहीं बुलाया है। कोई सूचनातक नहीं भेजी है। ऐसी स्थितिमें तुम्हारा वहाँ जाना किसी प्रकार भी श्रेयस्कर नहीं होगा।'' शङ्करजीके इस उपदेशसे सतीका प्रबोध नहीं हुआ। पिताका यज्ञ देखने, वहाँ जाकर माता और बहनोंसे मिलनेकी उनकी व्यग्रता किसी प्रकार भी कम न हो सकी। उनका प्रबल आग्रह देखकर भगवान् शङ्करजीने उन्हें वहाँ जानेकी अनुमति दे दी।

सतीने पिताके घर पहुँचकर देखा कि कोई भी उनसे आदर और प्रेमके साथ बात-चीत नहीं कर रहा है। सारे लोग मुँह फेरे हुए हैं। केवल उनकी माताने स्नेहसे उन्हें गले लगाया। बहनोंकी बातोंमें व्यंग्य और उपहासके भाव भरे हुए थे। परिजनोंके इस व्यवहारसे उनके मनको बहुत क्लेश पहुँचा। उन्होंने यह भी देखा कि वहाँ चतुर्दिक् भगवान् शङ्करजीके प्रति तिरस्कारका भाव भरा हुआ है। दक्षने उनके प्रति कुछ अपमानजनक वचन भी कहे। यह सब देखकर सतीका हृदय क्षोभ, ग्लानि और क्रोधसे सन्तप्त हो उठा। उन्होंने सोचा भगवान् शङ्करजीकी बात न मान, यहाँ आकर मैंने बहुत बड़ी गलती की है।

वह अपने पति भगवान् शङ्करके इस अपमानको सह न सकीं। उन्होंने अपने उस रूपको तत्क्षण वहीं योगाग्निद्वारा जलाकर भस्म कर दिया। वज्रपातके समान इस दारुण-दुःखद घटनाको सुनकर शङ्करजीने क्रुद्ध हो अपने गणोंको भेजकर दक्षके उस यज्ञका पूर्णतः विध्वंस करा दिया।

सतीने योगाग्निद्वारा अपने शरीरको भस्मकर अगले जन्ममें शैलराज हिमालयकी पुत्रीके रूपमें जन्म लिया। इस बार वह 'शैलपुत्री' नामसे विख्यात हुईं। पार्वती, हैमवती भी उन्हींके नाम हैं। उपनिषद्की एक कथाके अनुसार इन्हींने हैमवती स्वरूपसे देवताओंका गर्व-भंजन किया था।

'शैलपुत्री' देवीका विवाह भी शङ्करजीसे ही हुआ। पूर्वजन्मकी भाँति इस जन्ममें भी वह शिवजीकी अर्द्धांगिनी बनीं। नव दुर्गाओंमें प्रथम शैलपुत्री दुर्गाका महत्त्व और शक्तियाँ अनन्त हैं। नवरात्र-पूजनमें प्रथम दिवस इन्हींकी पूजा और उपासना की जाती है। इस प्रथम दिनकी उपासनामें योगी अपने मनको 'मूलाधार' चक्रमें स्थित करते हैं। यहींसे उनकी योगसाधनाका प्रारम्भ होता है।

२-ब्रह्मचारिणी

दधाना करपद्माभ्यामक्षमालाकमण्डलू।
देवी प्रसीदतु मयि ब्रह्मचारिण्यनुत्तमा॥

माँ दुर्गाकी नव शक्तियोंका दूसरा स्वरूप ब्रह्मचारिणीका है। यहाँ 'ब्रह्म' शब्दका अर्थ तपस्या है। ब्रह्मचारिणी अर्थात् तपकी चारिणी—तपका आचरण करनेवाली। कहा भी है—वेदस्तत्त्वं तपो ब्रह्म—वेद, तत्त्व और तप 'ब्रह्म' शब्दके अर्थ हैं। ब्रह्मचारिणी देवीका स्वरूप पूर्ण ज्योतिर्मय एवं अत्यन्त भव्य है। इनके दाहिने हाथमें जपकी माला एवं बायें हाथमें कमण्डलु रहता है।

अपने पूर्वजन्ममें जब ये हिमालयके घर पुत्री-रूपमें उत्पन्न हुई थीं तब नारदके उपदेशसे इन्होंने भगवान् शङ्करजीको पति-रूपमें प्राप्त करनेके लिये अत्यन्त कठिन तपस्या की थी। इसी दुष्कर तपस्याके कारण इन्हें तपश्चारिणी अर्थात् ब्रह्मचारिणी नामसे अभिहित किया गया। एक हजार वर्ष उन्होंने केवल फल-मूल खाकर व्यतीत किये थे। सौ वर्षोंतक केवल शाकपर निर्वाह किया था। कुछ दिनोंतक कठिन उपवास रखते हुए खुले आकाशके नीचे वर्षा और धूपके भयानक कष्ट सहे। इस कठिन तपश्चर्याके पश्चात् तीन हजार वर्षोंतक केवल जमीनपर टूटकर गिरे हुए बेलपत्रोंको खाकर वह अहर्निश भगवान् शङ्करकी आराधना करती रहीं। इसके बाद उन्होंने सूखे बेलपत्रोंको भी खाना छोड़ दिया। कई हजार वर्षोंतक वह निर्जल और निराहार तपस्या करती रहीं। पत्तों (पर्ण) को भी खाना छोड़ देनेके कारण उनका एक नाम 'अपर्णा' भी पड़ गया।

कई हजार वर्षोंकी इस कठिन तपस्याके कारण ब्रह्मचारिणी देवीका वह पूर्वजन्मका शरीर एकदम क्षीण हो उठा। वह अत्यन्त ही कृशकाय हो गयी थीं। उनकी यह दशा देखकर उनकी माता मेना अत्यन्त दुःखित हो उठीं। उन्होंने उन्हें उस कठिन तपस्यासे विरत करनेके लिये आवाज दी 'उ मा', अरे! नहीं, ओ! नहीं!' तबसे देवी ब्रह्मचारिणीका पूर्वजन्मका एक नाम 'उमा' भी पड़ गया था।

उनकी इस तपस्यासे तीनों लोकोंमें हाहाकार मच गया। देवता, ऋषि, सिद्धगण, मुनि सभी ब्रह्मचारिणी देवीकी इस तपस्याको अभूतपूर्व पुण्यकृत्य बताते हुए उनकी सराहना करने लगे। अन्तमें पितामह ब्रह्माजीने आकाशवाणीके द्वारा उन्हें सम्बोधित करते हुए प्रसन्न स्वरोंमें कहा—'हे देवि! आजतक किसीने ऐसी कठोर तपस्या नहीं की थी। ऐसी तपस्या तुम्हींसे सम्भव थी। तुम्हारे इस अलौकिक कृत्यकी चतुर्दिक् सराहना हो रही है। तुम्हारी मनोकामना सर्वतोभावेन परिपूर्ण होगी। भगवान् चन्द्रमौलि शिवजी तुम्हें पतिरूपमें प्राप्त होंगे। अब तुम तपस्यासे विरत होकर घर लौट जाओ। शीघ्र ही तुम्हारे पिता तुम्हें बुलाने आ रहे हैं।'

माँ दुर्गाजीका यह दूसरा स्वरूप भक्तों और सिद्धोंको अनन्तफल देनेवाला है। इनकी उपासनासे मनुष्यमें तप, त्याग, वैराग्य, सदाचार, संयमकी वृद्धि होती है। जीवनके कठिन संघर्षोंमें भी उसका मन कर्त्तव्य-पथसे विचलित नहीं होता। माँ ब्रह्मचारिणी देवीकी कृपासे उसे सर्वत्र सिद्धि और विजयकी प्राप्ति होती है। दुर्गापूजाके दूसरे दिन इन्हींके स्वरूपकी उपासना की जाती है। इस दिन साधकका मन 'स्वाधिष्ठान' चक्रमें स्थित होता है। इस चक्रमें अवस्थित मनवाला योगी उनकी कृपा और भक्ति प्राप्त करता है।

३-चन्द्रघण्टा
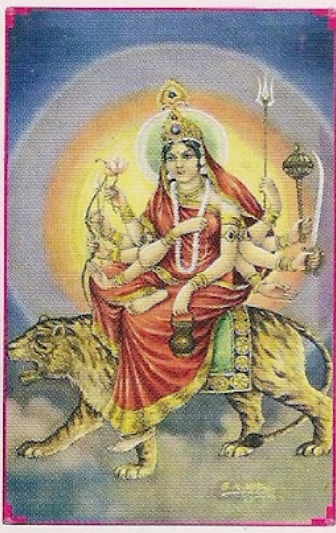
पिण्डजप्रवरारूढा चण्डकोपास्त्रकैर्युता।
प्रसादं तनुते मह्यं चन्द्रघण्टेति विश्रुता॥

माँ दुर्गाजीकी तीसरी शक्तिका नाम 'चन्द्रघण्टा' है। नवरात्रि-उपासनामें तीसरे दिन इन्हींके विग्रहका पूजन-आराधन किया जाता है। इनका यह स्वरूप परम शान्तिदायक और कल्याणकारी है। इनके मस्तकमें घण्टेके आकारका अर्धचन्द्र है, इसी कारणसे इन्हें चन्द्रघण्टा देवी कहा जाता है। इनके शरीरका रंग स्वर्णके समान चमकीला है। इनके दस हाथ हैं। इनके दसों हाथोंमें खड्ग आदि शस्त्र तथा बाण आदि अस्त्र विभूषित हैं। इनका वाहन सिंह है। इनकी मुद्रा युद्धके लिये उद्यत रहनेकी होती है। इनके घण्टेकी-सी भयानक चण्डध्वनिसे अत्याचारी दानव-दैत्य-राक्षस सदैव प्रकम्पित रहते हैं।

नवरात्रकी दुर्गा-उपासनामें तीसरे दिनकी पूजाका अत्यधिक महत्त्व है। इस दिन साधकका मन 'मणिपूर' चक्रमें प्रविष्ट होता है। माँ चन्द्रघण्टाकी कृपासे उसे अलौकिक वस्तुओंके दर्शन होते हैं। दिव्य सुगन्धियोंका अनुभव होता है तथा विविध प्रकारकी दिव्य ध्वनियाँ सुनायी देती हैं। ये क्षण साधकके लिये अत्यन्त सावधान रहनेके होते हैं।

माँ चन्द्रघण्टाकी कृपासे साधकके समस्त पाप और बाधाएँ विनष्ट हो जाती हैं। इनकी आराधना सद्यः फलदायी है। इनकी मुद्रा सदैव युद्धके लिये अभिमुख रहनेकी होती है, अतः भक्तोंके कष्टका निवारण ये अत्यन्त शीघ्र कर देती हैं। इनका वाहन सिंह है अतः इनका उपासक सिंहकी तरह पराक्रमी और निर्भय हो जाता है। इनके घण्टेकी ध्वनि सदा अपने भक्तोंकी प्रेत-बाधादिसे रक्षा करती रहती है। इनका ध्यान करते ही शरणागतकी रक्षाके लिये इस घण्टेकी ध्वनि निनादित हो उठती है।

दुष्टोंका दमन और विनाश करनेमें सदैव तत्पर रहनेके बाद भी इनका स्वरूप दर्शक और आराधकके लिये अत्यन्त सौम्यता एवं शान्तिसे परिपूर्ण रहता है। इनकी आराधनासे प्राप्त होनेवाला एक बहुत बड़ा सद्गुण यह भी है कि साधकमें वीरता-निर्भयताके साथ ही सौम्यता एवं विनम्रताका भी विकास होता है। उसके मुख, नेत्र तथा सम्पूर्ण कायामें कान्ति-गुणकी वृद्धि होती है। स्वरमें दिव्य, अलौकिक माधुर्यका समावेश हो जाता है। माँ चन्द्रघण्टाके भक्त और उपासक जहाँ भी जाते हैं लोग उन्हें देखकर शान्ति और सुखका अनुभव करते हैं। ऐसे साधकके शरीरसे दिव्य प्रकाशयुक्त परमाणुओंका अदृश्य विकिरण होता रहता है। यह दिव्य क्रिया साधारण चक्षुओंसे दिखलायी नहीं देती, किन्तु साधक और उसके सम्पर्कमें आनेवाले लोग इस बातका अनुभव भलीभाँति करते रहते हैं।

हमें चाहिये कि अपने मन, वचन, कर्म एवं कायाको विहित विधि-विधानके अनुसार पूर्णतः परिशुद्ध एवं पवित्र करके माँ चन्द्रघण्टाके शरणागत होकर उनकी उपासना-आराधनामें तत्पर हों। उनकी उपासनासे हम समस्त सांसारिक कष्टोंसे विमुक्त होकर सहज ही परमपदके अधिकारी बन सकते हैं। हमें निरन्तर उनके पवित्र विग्रहको ध्यानमें रखते हुए साधनाकी ओर अग्रसर होनेका प्रयत्न करना चाहिये। उनका ध्यान हमारे इहलोक और परलोक दोनोंके लिये परमकल्याणकारी और सद्गतिको देनेवाला है।

४-कूष्माण्डा

सुरासम्पूर्णकलशं रुधिराप्लुतमेव च।
दधाना हस्तपद्माभ्यां कूष्माण्डा शुभदास्तु मे॥

माँ दुर्गाजीके चौथे स्वरूपका नाम कूष्माण्डा है। अपनी मन्द, हलकी हँसीद्वारा अण्ड अर्थात् ब्रह्माण्डको उत्पन्न करनेके कारण इन्हें कूष्माण्डा देवीके नामसे अभिहित किया गया है।

जब सृष्टिका अस्तित्व नहीं था, चारों ओर अन्धकार-ही-अन्धकार परिव्याप्त था, तब इन्हीं देवीने अपने 'ईषत्' हास्यसे ब्रह्माण्डकी रचना की थी। अतः यही सृष्टिकी आदि-स्वरूपा, आदि शक्ति हैं। इनके पूर्व ब्रह्माण्डका अस्तित्व था ही नहीं।

इनका निवास सूर्यमण्डलके भीतरके लोकमें है। सूर्यलोकमें निवास कर सकनेकी क्षमता और शक्ति केवल इन्हींमें है। इनके शरीरकी कान्ति और प्रभा भी सूर्यके समान ही देदीप्यमान और भास्वर है। इनके तेजकी तुलना इन्हींसे की जा सकती है। अन्य कोई भी देवी-देवता इनके तेज और प्रभावकी समता नहीं कर सकते। इन्हींके तेज और प्रकाशसे दसों दिशाएँ प्रकाशित हो रही हैं। ब्रह्माण्डकी सभी वस्तुओं और प्राणियोंमें अवस्थित तेज इन्हींकी छाया है।

इनकी आठ भुजाएँ हैं। अतः ये अष्टभुजा देवीके नामसे भी विख्यात हैं। इनके सात हाथोंमें क्रमशः कमण्डलु, धनुष, बाण, कमल-पुष्प, अमृतपूर्ण कलश, चक्र तथा गदा है। आठवें हाथमें सभी सिद्धियों और निधियोंको देनेवाली जपमाला है। इनका वाहन सिंह है। संस्कृत भाषामें कूष्माण्ड कुम्हड़ेको कहते हैं। बलियोंमें कुम्हड़ेकी बलि इन्हें सर्वाधिक प्रिय है। इस कारणसे भी ये कूष्माण्डा कही जाती हैं।

नवरात्र-पूजनके चौथे दिन कूष्माण्डा देवीके स्वरूपकी ही उपासना की जाती है। इस दिन साधकका मन 'अनाहत' चक्रमें अवस्थित होता है। अतः इस दिन उसे अत्यन्त पवित्र और अचञ्चल मनसे कूष्माण्डा देवीके स्वरूपको ध्यानमें रखकर पूजा-उपासनाके कार्यमें लगना चाहिये। माँ कूष्माण्डाकी उपासनासे भक्तोंके समस्त रोग-शोक विनष्ट हो जाते हैं। इनकी भक्तिसे आयु, यश, बल और आरोग्यकी वृद्धि होती है। माँ कूष्माण्डा अत्यल्प सेवा और भक्तिसे भी प्रसन्न होनेवाली हैं। यदि मनुष्य सच्चे हृदयसे इनका शरणागत बन जाय तो फिर उसे अत्यन्त सुगमतासे परम पदकी प्राप्ति हो सकती है।

हमें चाहिये कि हम शास्त्रों-पुराणोंमें वर्णित विधि-विधानके अनुसार माँ दुर्गाकी उपासना और भक्तिके मार्गपर अहर्निश अग्रसर हों। माँके भक्ति-मार्गपर कुछ ही कदम आगे बढ़नेपर भक्त साधकको उनकी कृपाका सूक्ष्म अनुभव होने लगता है। यह दुःख-स्वरूप संसार उसके लिये अत्यन्त सुखद और सुगम बन जाता है। माँकी उपासना मनुष्यको सहज भावसे भवसागरसे पार उतारनेके लिये सर्वाधिक सुगम और श्रेयस्कर मार्ग है। माँ कूष्माण्डाकी उपासना मनुष्यको आधियों-व्याधियोंसे सर्वथा विमुक्त करके उसे सुख, समृद्धि और उन्नतिकी ओर ले जानेवाली है। अतः अपनी लौकिक-पारलौकिक उन्नति चाहनेवालोंको इनकी उपासनामें सदैव तत्पर रहना चाहिये।

५-स्कन्दमाता

सिंहासनगता नित्यं पद्माश्रितकरद्वया।
शुभदास्तु सदा देवी स्कन्दमाता यशस्विनी॥

माँ दुर्गाजीके पाँचवें स्वरूपको स्कन्दमाताके नामसे जाना जाता है। ये भगवान् स्कन्द 'कुमार कार्त्तिकेय' नामसे भी जाने जाते हैं। ये प्रसिद्ध देवासुर-संग्राममें देवताओंके सेनापति बने थे। पुराणोंमें इन्हें कुमार और शक्तिधर कहकर इनकी महिमाका वर्णन किया गया है। इनका वाहन मयूर है। अतः इन्हें मयूरवाहनके नामसे भी अभिहित किया गया है।

इन्हीं भगवान् स्कन्दकी माता होनेके कारण माँ दुर्गाजीके इस पाँचवें स्वरूपको स्कन्दमाताके नामसे जाना जाता है। इनकी उपासना नवरात्रि-पूजाके पाँचवें दिन की जाती है। इस दिन साधकका मन 'विशुद्ध' चक्रमें अवस्थित होता है। इनके विग्रहमें भगवान् स्कन्दजी बालरूपमें इनकी गोदमें बैठे होते हैं। स्कन्दमातृस्वरूपिणी देवीकी चार भुजाएँ हैं। ये दाहिनी तरफकी ऊपरवाली भुजासे भगवान् स्कन्दको गोदमें पकड़े हुए हैं और दाहिनी तरफकी नीचेवाली भुजा जो ऊपरकी ओर उठी हुई है उसमें कमल-पुष्प है। बायीं तरफकी ऊपरवाली भुजा वरमुद्रामें तथा नीचेवाली भुजा जो ऊपरकी ओर उठी है उसमें भी कमल-पुष्प ली हुई हैं। इनका वर्ण पूर्णतः शुभ्र है। ये कमलके आसनपर विराजमान रहती हैं। इसी कारणसे इन्हें पद्मासना देवी भी कहा जाता है। सिंह भी इनका वाहन है।

नवरात्र-पूजनके पाँचवें दिनका शास्त्रोंमें पुष्कल महत्त्व बताया गया है। इस चक्रमें अवस्थित मनवाले साधककी समस्त बाह्य क्रियाओं एवं चित्तवृत्तियोंका लोप हो जाता है। वह विशुद्ध चैतन्य स्वरूपकी ओर अग्रसर हो रहा होता है। उसका मन समस्त लौकिक, सांसारिक, मायिक बन्धनोंसे विमुक्त होकर पद्मासना माँ स्कन्दमाताके स्वरूपमें पूर्णतः तल्लीन होता है। इस समय साधकको पूर्ण सावधानीके साथ उपासनाकी ओर अग्रसर होना चाहिये। उसे अपनी समस्त ध्यान-वृत्तियोंको एकाग्र रखते हुए साधनाके पथपर आगे बढ़ना चाहिये।

माँ स्कन्दमाताकी उपासनासे भक्तकी समस्त इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। इस मृत्युलोकमें ही उसे परम शान्ति और सुखका अनुभव होने लगता है। उसके लिये मोक्षका द्वार स्वयमेव सुलभ हो जाता है। स्कन्दमाताकी उपासनासे बालरूप स्कन्दभगवान्‌की उपासना भी स्वयमेव हो जाती है। यह विशेषता केवल इन्हींको प्राप्त है, अतः साधकको स्कन्दमाताकी उपासनाकी ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। सूर्यमण्डलकी अधिष्ठात्री देवी होनेके कारण इनका उपासक अलौकिक तेज एवं कान्तिसे सम्पन्न हो जाता है। एक अलौकिक प्रभामण्डल अदृश्यभावसे सदैव उसके चतुर्दिक् परिव्याप्त रहता है। यह प्रभामण्डल प्रतिक्षण उसके योगक्षेमका निर्वहन करता रहता है।

अतः हमें एकाग्रभावसे मनको पवित्र रखकर माँकी शरणमें आनेका प्रयत्न करना चाहिये। इस घोर भवसागरके दुःखोंसे मुक्ति पाकर मोक्षका मार्ग सुलभ बनानेका इससे उत्तम उपाय दूसरा नहीं है।

६-कात्यायनी

चन्द्रहासोज्ज्वलकरा शार्दूलवरवाहना।
कात्यायनी शुभं दद्याद्देवी दानवघातिनी॥

माँ दुर्गाके छठवें स्वरूपका नाम कात्यायनी है। इनका कात्यायनी नाम पड़नेकी कथा इस प्रकार है—कत नामक एक प्रसिद्ध महर्षि थे। उनके पुत्र ऋषि कात्य हुए। इन्हीं कात्यके गोत्रमें विश्वप्रसिद्ध महर्षि कात्यायन उत्पन्न हुए थे। इन्होंने भगवती पराम्बाकी उपासना करते हुए बहुत वर्षोंतक बड़ी कठिन तपस्या की थी। उनकी इच्छा थी कि माँ भगवती उनके घर पुत्रीके रूपमें जन्म लें। माँ भगवतीने उनकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली थी।

कुछ काल पश्चात् जब दानव महिषासुरका अत्याचार पृथ्वीपर बहुत बढ़ गया तब भगवान् ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनोंने अपने-अपने तेजका अंश देकर महिषासुरके विनाशके लिये एक देवीको उत्पन्न किया। महर्षि कात्यायनने सर्वप्रथम इनकी पूजा की। इसी कारणसे यह कात्यायनी कहलायीं।

ऐसी भी कथा मिलती है कि ये महर्षि कात्यायनके वहाँ पुत्रीरूपसे उत्पन्न भी हुई थीं। आश्विन कृष्ण चतुर्दशीको जन्म लेकर शुक्ल सप्तमी, अष्टमी तथा नवमी-तक—तीन दिन—इन्होंने कात्यायन ऋषिकी पूजा ग्रहण कर दशमीको महिषासुरका वध किया था।

माँ कात्यायनी अमोघ फलदायिनी हैं। भगवान् कृष्णको पतिरूपमें पानेके लिये व्रजकी गोपियोंने इन्हींकी पूजा कालिन्दी-यमुनाके तटपर की थी। ये व्रजमण्डलकी अधिष्ठात्री देवीके रूपमें प्रतिष्ठित हैं। इनका स्वरूप अत्यन्त ही भव्य और दिव्य है। इनका वर्ण स्वर्णके समान चमकीला और भास्वर है। इनकी चार भुजाएँ हैं। माताजीका दाहिनी तरफका ऊपरवाला हाथ अभयमुद्रामें है तथा नीचेवाला वरमुद्रामें है। बायीं तरफके ऊपरवाले हाथमें तलवार और नीचेवाले हाथमें कमल-पुष्प सुशोभित है। इनका वाहन सिंह है।

दुर्गापूजाके छठवें दिन इनके स्वरूपकी उपासना की जाती है। उस दिन साधकका मन 'आज्ञा' चक्रमें स्थित होता है। योगसाधनामें इस आज्ञा चक्रका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस चक्रमें स्थित मनवाला साधक माँ कात्यायनीके चरणोंमें अपना सर्वस्व निवेदित कर देता है। परिपूर्ण आत्मदान करनेवाले ऐसे भक्तको सहज भावसे माँ कात्यायनीके दर्शन प्राप्त हो जाते हैं। माँ कात्यायनीकी भक्ति और उपासनाद्वारा मनुष्यको बड़ी सरलतासे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष चारों फलोंकी प्राप्ति हो जाती है। वह इस लोकमें स्थित रहकर भी अलौकिक तेज और प्रभावसे युक्त हो जाता है। उसके रोग, शोक, संताप, भय आदि सर्वथा विनष्ट हो जाते हैं। जन्म-जन्मान्तरके पापोंको विनष्ट करनेके लिये माँकी उपासनासे अधिक सुगम और सरल मार्ग दूसरा नहीं है। इनका उपासक निरन्तर इनके सान्निध्यमें रहकर परमपदका अधिकारी बन जाता है। अतः हमें सर्वतोभावेन माँके शरणागत होकर उनकी पूजा-उपासनाके लिये तत्पर होना चाहिये।

७-कालरात्रि

एकवेणी जपाकर्णपूरा नग्ना खरास्थिता।
लम्बोष्ठी कर्णिकाकर्णी तैलाभ्यक्तशरीरिणी॥
वामपादोल्लसल्लोहलताकण्टकभूषणा ।
वर्धनमूर्धध्वजा कृष्णा कालरात्रिर्भयङ्करी॥

माँ दुर्गाजीकी सातवीं शक्ति कालरात्रिके नामसे जानी जाती हैं। इनके शरीरका रंग घने अन्धकारकी तरह एकदम काला है। सिरके बाल बिखरे हुए हैं। गलेमें विद्युत्की तरह चमकनेवाली माला है। इनके तीन नेत्र हैं। ये तीनों नेत्र ब्रह्माण्डके सदृश गोल हैं। इनसे विद्युत्के समान चमकीली किरणें निःसृत होती रहती हैं। इनकी नासिकाके श्वास-प्रश्वाससे अग्निकी भयङ्कर ज्वालाएँ निकलती रहती हैं। इनका वाहन गर्दभ—गदहा है। ऊपर उठे हुए दाहिने हाथकी वरमुद्रासे सभीको वर प्रदान करती हैं। दाहिनी तरफका नीचेवाला हाथ अभयमुद्रामें है। बायीं तरफके ऊपरवाले हाथमें लोहेका काँटा तथा नीचेवाले हाथमें खड्ग (कटार) है।

माँ कालरात्रिका स्वरूप देखनेमें अत्यन्त भयानक है, लेकिन ये सदैव शुभ फल ही देनेवाली हैं। इसी कारण इनका एक नाम 'शुभङ्करी' भी है। अतः इनसे भक्तोंको किसी प्रकार भी भयभीत अथवा आतङ्कित होनेकी आवश्यकता नहीं है।

दुर्गापूजाके सातवें दिन माँ कालरात्रिकी उपासनाका विधान है। इस दिन साधकका मन 'सहस्त्रार' चक्रमें स्थित रहता है। उसके लिये ब्रह्माण्डकी समस्त सिद्धियोंका द्वार खुलने लगता है। इस चक्रमें स्थित साधकका मन पूर्णतः माँ कालरात्रिके स्वरूपमें अवस्थित रहता है। उनके साक्षात्कारसे मिलनेवाले पुण्यका वह भागी हो जाता है। उसके समस्त पापों-विघ्नोंका नाश हो जाता है। उसे अक्षय पुण्य-लोकोंकी प्राप्ति होती है।

माँ कालरात्रि दुष्टोंका विनाश करनेवाली हैं। दानव, दैत्य, राक्षस, भूत, प्रेत आदि इनके स्मरणमात्रसे ही भयभीत होकर भाग जाते हैं। ये ग्रह-बाधाओंको भी दूर करनेवाली हैं। इनके उपासकको अग्नि-भय, जल-भय, जन्तु-भय, शत्रु-भय, रात्रि-भय आदि कभी नहीं होते। इनकी कृपासे वह सर्वथा भय-मुक्त हो जाता है।

माँ कालरात्रिके स्वरूप-विग्रहको अपने हृदयमें अवस्थित करके मनुष्यको एकनिष्ठ भावसे उनकी उपासना करनी चाहिये। यम, नियम, संयमका उसे पूर्ण पालन करना चाहिये। मन, वचन, कायाकी पवित्रता रखनी चाहिये। वह शुभङ्करी देवी हैं। उनकी उपासनासे होनेवाले शुभोंकी गणना नहीं की जा सकती। हमें निरन्तर उनका स्मरण, ध्यान और पूजन करना चाहिये।

८-महागौरी

श्वेते वृषे समारूढा श्वेताम्बरधरा शुचिः।
महागौरी शुभं दद्यान्महादेवप्रमोददा॥

माँ दुर्गाजीकी आठवीं शक्तिका नाम महागौरी है। इनका वर्ण पूर्णतः गौर है। इस गौरताकी उपमा शङ्ख, चन्द्र और कुन्दके फूलसे दी गयी है। इनकी आयु आठ वर्षकी मानी गयी है—*'अष्टवर्षा भवेद् गौरी'*। इनके समस्त वस्त्र एवं आभूषण आदि भी श्वेत हैं। इनकी चार भुजाएँ हैं। इनका वाहन वृषभ है। इनके ऊपरके दाहिने हाथमें अभय-मुद्रा और नीचेवाले दाहिने हाथमें त्रिशूल है। ऊपरवाले बायें हाथमें डमरू और नीचेके बायें हाथमें वर-मुद्रा है। इनकी मुद्रा अत्यन्त शान्त है।

अपने पार्वतीरूपमें इन्होंने भगवान् शिवको पति-रूपमें प्राप्त करनेके लिये बड़ी कठोर तपस्या की थी। इनकी प्रतिज्ञा थी कि *'व्रियेऽहं वरदं शम्भुं नान्यं देवं महेश्वरात्।'* (नारद-पाञ्चरात्र)। गोस्वामी तुलसीदासजीके अनुसार भी इन्होंने भगवान् शिवके वरणके लिये कठोर संकल्प लिया था—

जन्म कोटि लगि रगर हमारी।
बरउँ संभु न त रहउँ कुँआरी॥

इस कठोर तपस्याके कारण इनका शरीर एकदम काला पड़ गया। इनकी तपस्यासे प्रसन्न और सन्तुष्ट होकर जब भगवान् शिवने इनके शरीरको गङ्गाजीके पवित्र जलसे मलकर धोया तब वह विद्युत् प्रभाके समान अत्यन्त कान्तिमान्—गौर—हो उठा। तभीसे इनका नाम महागौरी पड़ा।

दुर्गापूजाके आठवें दिन महागौरीकी उपासनाका विधान है। इनकी शक्ति अमोघ और सद्यः फलदायिनी है। इनकी उपासनासे भक्तोंके सभी कल्मष धुल जाते हैं। उसके पूर्वसंचित पाप भी विनष्ट हो जाते हैं। भविष्यमें पाप-संताप, दैन्य-दुःख उसके पास कभी नहीं आते। वह सभी प्रकारसे पवित्र और अक्षय पुण्योंका अधिकारी हो जाता है।

माँ महागौरीका ध्यान-स्मरण, पूजन-आराधन भक्तोंके लिये सर्वविध कल्याणकारी है। हमें सदैव इनका ध्यान करना चाहिये। इनकी कृपासे अलौकिक सिद्धियोंकी प्राप्ति होती है। मनको अनन्यभावसे एकनिष्ठ कर मनुष्यको सदैव इनके ही पादारविन्दोंका ध्यान करना चाहिये। ये भक्तोंका कष्ट अवश्य ही दूर करती हैं। इनकी उपासनासे आर्तजनोंके असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाते हैं। अतः इनके चरणोंकी शरण पानेके लिये हमें सर्वविध प्रयत्न करना चाहिये। पुराणोंमें इनकी महिमाका प्रचुर आख्यान किया गया है। ये मनुष्यकी वृत्तियोंको सत्की ओर प्रेरित करके असत्का विनाश करती हैं। हमें प्रपत्तिभावसे सदैव इनका शरणागत बनना चाहिये।

९-सिद्धिदात्री
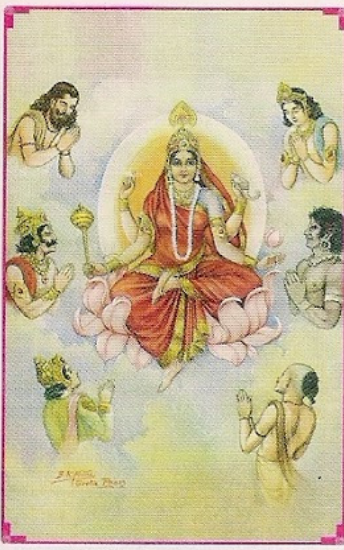
सिद्धगन्धर्वयक्षाद्यैरसुरैरमरैरपि ।
सेव्यमाना सदा भूयात् सिद्धिदा सिद्धिदायिनी॥

माँ दुर्गाजीकी नवीं शक्तिका नाम सिद्धिदात्री है। ये सभी प्रकारकी सिद्धियोंको देनेवाली हैं। मार्कण्डेयपुराणके अनुसार अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व—ये आठ सिद्धियाँ होती हैं। ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके श्रीकृष्ण-जन्मखण्डमें यह संख्या अट्ठारह बतायी गयी है। इनके नाम इस प्रकार हैं—

१-अणिमा	७-सर्वकामावसायिता	१३-सृष्टि
२-लघिमा	८-सर्वज्ञत्व	१४-संहारकरणसामर्थ्य
३-प्राप्ति	९-दूरश्रवण	१५-अमरत्व
४-प्राकाम्य	१०-परकायप्रवेशन	१६-सर्वन्यायकत्व
५-महिमा	११-वाक्‌सिद्धि	१७-भावना
६-ईशित्व, वाशित्व	१२-कल्पवृक्षत्व	१८-सिद्धि

माँ सिद्धिदात्री भक्तों और साधकोंको ये सभी सिद्धियाँ प्रदान करनेमें समर्थ हैं। देवीपुराणके अनुसार भगवान् शिवने इनकी कृपासे ही इन सिद्धियोंको प्राप्त किया था। इनकी अनुकम्पासे ही भगवान् शिवका आधा शरीर देवीका हुआ था। इसी कारण वह लोकमें 'अर्द्धनारीश्वर' नामसे प्रसिद्ध हुए। माँ सिद्धिदात्री चार भुजाओंवाली हैं। इनका वाहन सिंह है। ये कमल पुष्पपर भी आसीन होती हैं। इनकी दाहिनी तरफ़के नीचेवाले हाथमें चक्र, ऊपरवाले हाथमें गदा तथा बायीं तरफके नीचेवाले हाथमें शङ्ख और ऊपरवाले हाथमें कमलपुष्प है। नवरात्र-पूजनके नवें दिन इनकी उपासना की जाती है। इस दिन शास्त्रीय विधि-विधान और पूर्ण निष्ठाके साथ साधना करनेवाले साधकको सभी सिद्धियोंकी प्राप्ति हो जाती है। सृष्टिमें कुछ भी उसके लिये अगम्य नहीं रह जाता। ब्रह्माण्डपर पूर्ण विजय प्राप्त करनेकी सामर्थ्य उसमें आ जाती है।

प्रत्येक मनुष्यका यह कर्त्तव्य है कि वह माँ सिद्धिदात्रीकी कृपा प्राप्त करनेका निरन्तर प्रयत्न करे। उनकी आराधनाकी ओर अग्रसर हो। इनकी कृपासे अनन्त दुःखरूप संसारसे निर्लिप्त रहकर सारे सुखोंका भोग करता हुआ वह मोक्षको प्राप्त कर सकता है।

नव दुर्गाओंमें माँ सिद्धिदात्री अन्तिम हैं। अन्य आठ दुर्गाओंकी पूजा-उपासना शास्त्रीय विधि-विधानके अनुसार करते हुए भक्त दुर्गा-पूजाके नवें दिन इनकी उपासनामें प्रवृत्त होते हैं। इन सिद्धिदात्री माँकी उपासना पूर्ण कर लेनेके बाद भक्तों और साधकोंकी लौकिक-पारलौकिक सभी प्रकारकी कामनाओंकी पूर्ति हो जाती है। लेकिन सिद्धिदात्री माँके कृपापात्र भक्तके भीतर कोई ऐसी कामना शेष बचती ही नहीं है, जिसे वह पूर्ण करना चाहे। वह सभी सांसारिक इच्छाओं, आवश्यकताओं और स्पृहाओंसे ऊपर उठकर मानसिकरूपसे माँ भगवतीके दिव्य लोकोंमें विचरण करता हुआ उनके कृपा-रस-पीयूषका निरन्तर पान करता हुआ, विषय-भोग-शून्य हो जाता है। माँ भगवतीका परम सान्निध्य ही उसका सर्वस्व हो जाता है। इस परम पदको पानेके बाद उसे अन्य किसी भी वस्तुकी आवश्यकता नहीं रह जाती।

माँके चरणोंका यह सान्निध्य प्राप्त करनेके लिये हमें निरन्तर नियमनिष्ठ रहकर उनकी उपासना करनी चाहिये। माँ भगवतीका स्मरण, ध्यान, पूजन हमें इस संसारकी असारताका बोध कराते हुए वास्तविक परमशान्तिदायक अमृत पदकी ओर ले जानेवाला है।

श्रीअम्बाजीकी आरती

जय अम्बे गौरी मैया जय श्यामागौरी।
तुमको निशिदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिव री॥ जय अम्बे०
माँग सिंदूर विराजत टीको मृगमदको।
उज्ज्वलसे दोउ नैना, चंद्रवदन नीको॥ जय अम्बे०
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै।
रक्त-पुष्प गल माला, कण्ठनपर साजै॥ जय अम्बे०
केहरि वाहन राजत, खड्ग खपर धारी।
सुर-नर-मुनि-जन सेवत, तिनके दुखहारी॥ जय अम्बे०
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती।
कोटिक चंद्र दिवाकर सम राजत ज्योती॥ जय अम्बे०
शुम्भ निशुम्भ विदारे, महिषासुर-घाती।
धूम्रविलोचन नैना निशिदिन मदमाती॥ जय अम्बे०
चण्ड मुण्ड संहारे, शोणितबीज हरे।
मधु कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे॥ जय अम्बे०
ब्रह्माणी, रुद्राणी तुम कमलारानी।
आगम-निगम-बखानी, तुम शिव पटरानी॥ जय अम्बे०
चौंसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरूँ।
बाजत ताल मृदंगा औ बाजत डमरू॥ जय अम्बे०
तुम ही जगकी माता, तुम ही हो भरता।
भक्तनकी दुख हरता सुख सम्पति करता॥ जय अम्बे०
भुजा चार अति शोभित, वर-मुद्रा धारी।
मनवाञ्छित फल पावत, सेवत नर-नारी॥ जय अम्बे०
कंचन थाल विराजत अगर कपुर बाती।
(श्री) मालकेतुमें राजत कोटिरतन ज्योती॥ जय अम्बे०
(श्री) अम्बेजीकी आरति जो कोइ नर गावै।
कहत शिवानँद स्वामी, सुख सम्पति पावै॥ जय अम्बे०